झाड़गिरि—(मनहीं मन) मैंने तो अति श्रम उठाया ढूंढि हारे कहीं न पाया अब कहाँ जाकर खोजूं ? अच्छा चलूं एक उस मनुष्य से पूछूं कि जो बिना स्वर और ताल के नाचता है और खूसट पक्षी नृत्य देख २ प्रसन्न हो वाह २ कर रहे हैं ॥

(पास गया)

झाड़गिरि—कहिये महाराज जी आप क्यों एकान्त में नाच रहे हैं और शरीर तेजस्वी का नाम क्या है ॥

गानेवाला—ह ह ह ह हा नाम तो मेरा बड़ा भारी है ॥

झाड़गिरि—जैसे पहाड़ ? ॥

गानेवाला—इस से भी बड़ा ॥

झाड़गिरि—तो आप बताइयेगा ॥

गानेवाला—ह ह ह ह हा तो बतलाही दूं ? ॥

झाड़गिरि—हाँ हां अवश्य बतलाइये ॥

गानेवाला—देखो पहाड़ में प हा ड़ ये तीन अक्षर हैं और मेरे नाम में पांच अक्षर हैं ढ पो ल शं ख ॥

झाड़गिरि—क्यों न हो अब आप कुछ गाना मुझे भी सुनाइये ॥

ढपोलशंख—ह ह ह ह हा सुनिये ॥

(तंबूरा बजा २ कर नाचने और गाने लगे)

श्याम बिन पावस नहिं भावे । गोपिन को चैन कस आवे॥
असाढ़ आगम घटा उमड़ीं । अब चित्त नहिं होवे सुखी ॥
मोकों रट श्याम की लागी । उन बिन मैं हौं बहुतै दुखी॥
उमड़ घुमड़ कर बदरा गरजै । मोरिला शब्द सुनाता है ॥
कुहिक कुहिक करि कोइल बोलै । जिया चैन नहिं आता है॥
(तिकधिक तिकधिक अ ह ह हा)

झाड़गिरि—वाह वा आप ने खूब ही गाया महाराज जी मेरा एक काम आप से है ॥

ढपोलसं०—ह ह ह हा कहो तौ क्या काम है ? ॥

झाड़गिरि—एक मंडक नाम शिष्य कहीं भाग गया है सो आप ने तो उसे नहीं देखा ॥

ढपोलसंख—हो हां हां देखें तो हैं वर्ना बल्लिपुर में पता लगा दूं ॥

झाड़गिरि—आप क्या समझे ? ॥

ढपोल०—हम यह समझे कि बहुत से सिक्ख जो राजा की सेना में सेनादार हैं उन में से एक मंडूक भी कोई सिक्ख होगा—

झाड़गिरि—वे सिक्ख में नहीं कहता एक चेला मंडूक नाम का भाग गया है ॥

ढपोल०—तो आप ने पहिले ऐसा ही क्यों न कहा था ॥

झाड़गिरि—यह हमारी भूल है पर कहिये अब तो आप समझे कुछ भ्रम तो नहीं रहा ॥

ढपोल० – ईश्वर कहो अब मैं बावन तोले पाव रत्ती समझ गया कुछ भी मीन मेख नहीं है ॥

झाड़गिरि – जल्द ही पता लगाइये ॥

ढपोल० – अभी लगाता हूं ॥

(दोनों मिल कर एक ग्राम में गये)

ढपोल० – देखो ये चेले गरे धरे हैं जितने चाहो ले लो ॥

झाड़गि० – ये लकड़ी के चेले नहीं ॥

ढपोल० – अच्छा तो मेरे स्थान पर चलो जहां मैं गाता था॥

(झाड़गिरि और ढपोलशंख आये)

ढपोल० – मैं तो अब अपने नाचने गाने में लगता हूं कहीं दूसरी जगह जा कर खोजो ॥

(झाड़गिरि ढपोलशंख के पास से बिदा हो कर घर पर आया और सपथूदास झपटूदास इत्यादि को मिल और चेले को देख प्रसन्न होय यहां की सब व्यवस्था हंस २ कह सुनाई)

सपथू० – सब आये पर काशानन्द का अभी तक कुछ पता नहीं है ॥

झाड़गिरि – देखो आते ही होंगे ॥

(थोड़ी देर बाद काशानंद भी आ पहुंचा)

सपथू० – भागये भाई काणानन्द कहो अच्छे तो रहे ? ॥

काणानन्द – हाँ आगये अच्छे रहने का हाल तो—

[काणानंद चेलों को देखकर बोले]

काणानन्द – तुम अपने गुरु सपथूदास जी को खूब मानियो ये देवता हैं मनुष्यों में इन की गिनती नहीं ॥

मंडूक – हम तो सब के सेवक और अज्ञाकारी हैं अब चल कर गुरु मुकन्दर गिरि को तो दिखाओ जिन के पीछे आप सब विपत्ति में फंसे हैं ॥

[सब समेत चेला मुकन्दरगिरि के पास पहुंचा]

मुकन्दर – बोलो बोलो तुम लोग कौन और क्यों आये ?॥

मंडूक – मैं वही छिपी हुई खड्ग हूं इसी से तुझे काटने आया हूं ॥

मुकन्दर – हटो हटो हटो देखूं तो खड्ग कैसी है ॥

मंडूक – लाओ तो गुरु झोली से गोली ॥

मुकन्दर – नहीं २ अब भागताहूं जाताहूं गोली ओली कुछ न लाओ देखो जाताहूं ॥

मंडूक – कहो गुरु जी मुकन्दर गिरि के ऊपर का अभ्यास कहां गया ? ॥

सपथू० – बच्चा तुम बड़े चतुर हो—

मुकन्दर – बच्चे सपथू दास मुझे क्षुधा लगी है कुछ खाये पीये का उपाय कर ।

सपथू० – गुरू जी नहाइये मैं भोजन बनवाता हूं—

(घर जाकर सपथू ने कंजरी से कहा कि गुरू जी के खाणें के हेतु रसोई बनाओ)

कंजरी – खाण को का का बनाऊं ॥

सपथू० – अकर की चवा मत बना ॥

कंजरी – नाहीं मैं कहतो हौं कि गुरू जी के खइबे का कोनि चीज़ बनावौं ॥

सपथू० – सब उत्तम २ सामान बनाओ ॥

कंजरी – अच्छा तू जा नहा मैं बनावति हौं ॥

(सपथूराम घर से लौट आया)

सपथू० – गुरू जी आओ हम सब उस सरिता में चलो नहावें (सबगये)

(झपटूराम नहीं २ कर यह श्लोक पढ़ता है)

गंगा नहातम् स्वर्ग पातं । सरिता नहातम् पराय भागो ।
कूपो नहातम् शोक जातः । तालो नहातम् रोगादि हरी ।

गुरू० – वाह बच्चा तू तो बड़ा ही विद्वान है ॥

काणानंद – गुरू जी ये झपटूराम बालक पन ही से ऐसे चतुर हैं कि इन के गुरू ने कुछ ऐसी रीति विद्या की इन को बता दी है कि उसी से ये भारी दिग्गज पंडित हो गये ॥

मुकु० – विद्या आना तो अति सहज है पर हम सरोखा जब पाठक मिले जिस बात को कोई एक जन्म में भी न बता सके उस को मैं क्षण मात्र में बताकर अद्वितीय करदं ॥

काणानंद – गुरू जी बतला दीजिये अन्धे के हाथ भी माणिक लगे—

मुकुन्दर – बच्चे अनुस्वार और बिसर्ग और मकार वालों में जब बढ़ रते जाओ निपुण हो जाओगे—

काणानंद – गुरु जी मैं अब कहो तो बात की बात में श्लोक बना दूं अच्छा सनह। लीजिये कैसा उत्तम श्लोक बना है—

गुरू मोरि बड़े प्रवीणम् । जस चाहम् करन्तं ॥
हमंहं बिधो बंना विध्यम् । ममःफहः सकल मायियोः ॥

(भवधूदास ऽह बच्च हाते में ऽता है)

मुक्ति मार्ग के हेतु प्रभु ने कीन्हों यतन जस ॥
सुनहु धर्म कुल केतु । आदि अन्त करिहहुं कथन ॥

एक बार प्रभु चित्त बिचारो । लीन्हों भाय मनुज अवतारो॥
शिक्षा सबन दई उन भारी । माया मोह सकल जग टारो॥
सेवा करहिं चरण मेरे ! सारूं कार्य्य सभी मैं तेरे ॥
अंत समय गति सुख से देहों करिहै भक्ति मोरि जो सेहों॥
सृष्टि रचित सब मोरि निहारो । भक्त नेह चित्त आह्लाधारो॥
सरिता एक बही में आई । सो तो चित्त मांहि अति भाई ॥

अब सोधी मैं बैकुंठ जैहौं। पदवी श्रेष्ठ अवशि करि पैहौं ॥

मुकुन्दरगिरि—अबे जल्द ही चल कर मेरे खाणे पीणे का उपाय करा ये तुम्हारे बचन बाण के समान अंग में लगते हैं पर क्षुधा के मारे ध्यान नहीं बंधता—

(सब चल कर सपथूदास के घर पर आये)

पांचवां अंक आरंभ हुआ।

सपथूदास—अरी प्यारी खाणे पीणे का सब सामान ठीक है॥

कंजरी॥ हाँ सब का बुलाओ तयार धरो है॥

(सब लोग बुला आये)

मुकु०—अरे बच्चे सपथूदास तूने भोजन खूब बनवाये॥

सपथू०—हाँ गुरू जी आप की कृपा से॥

मुकु०—बच्चे सपथू दास ये क्या तन्दुल हैं॥

सपथू०—हाँ गुरू जी॥

मुकुन्दर—(झिड़िक कर) अरे हां हां तन्दुल न डालना आज एकादशी को न खाऊंगा॥

कंजरी—गुरू जो जो तू तन्दुल ना लेहै तौ कोऊ ना लेहै ऐसौ डारे परे रहिहैं अब का बिकारबु कुछ नीक नाहैं आय जो बाभा तू ने निदरि डारो॥

मुछ०—अच्छा तो थोड़े से डाल दे एक डाढ़ से खा लूंगा और एक से व्रत्त करूंगा ॥

[दिये गए]

सपथूदास—गुरू जी अब आप लोग नमो नारायन करें ॥

[सब भोजन करने लगे]

मुछ०—वाह वाह बच्चे खूब भोजन बने हैं अब जो कुछ समान रसोंई में हो सब मुझ को परोस दे—

[सपथूदास ने सब सामान गुरू मुछन्दर गिरि के सामने लाकर धर दिया और सब लोगों से कहा कि तुम लोग भी जो कुछ चाहिए मांग लीजियो]

सबोंने—(मनही मन) मुछन्दरा तो बड़ाही अहारी है और जो सपथू दास पूछते हैं कि जो कुछ जिस को चाहना हो माँग लेवे सो कहां से माँगे रसोंई में तो कुछ रहा ही नहीं (प्रगट) नहीं नहीं हम लोग तृप्त हो गए कुछ न लेंगे ॥

[थोड़ी देर बाद]

मुछ०—बच्चे सपथू दास मैं तो भोजन कर चुका ॥

सपथू०—अच्छा गुरू जी उठियें ॥

मुक्०—परन्तु एक यह बात है कि चौथाई भाग रोटी का जो रख छोड़ा है कदाचित कहौ तौ (इतना कह कर चुप हो गया)

(सपथू दास जान गया कि गुरू जी तृप्त नहीं हुए)

सपथू॥ गुरू जी आप यह भाग रोटी का न छोड़ें आगे का जूठान्न कदापि न छोड़ना चाहिए॥

मुक्॥ वाह बच्चा तू बड़ा बुद्धिमान है॥

(रोटी का चौथाई भाग भी उठा कर खा गया)

कंजरी॥ गुरू जी और कुछ तो नाईं लयाहौ॥

मुक्०॥ बच्चो नहीं काहे को दिक होगी॥

सपथू०॥ (मनहीं मन) यह गुरू जो कुछ न कहे तो अच्छा क्योंकि जो मांगही बैठे तो क्या दिया जायगा (प्रगट) गुरू जी जल लीजिये कुल्ली कीजिये॥

[मुकुन्दर ने कुल्ली की और निश्चिन्त हो एक मसहरी पर जा लेटे]

[थोड़ी देर बाद मुकुन्दर बोला]

मुक्०॥ बच्चे सपथू दास मुझे दिशा की सूग लगी है जा एक तूंबी पानी तो ले आ॥

[सपथदास लाया मुकन्दर गिरि गए]

(सब साथ के लोग परस्पर कह रहे हैं कि गुरू मुकन्दर गिरि तो बड़ाही असंतोषी है इतने में गुरू जी भी आ गए)

मुक०—बच्चो ऐसी औषधी बतलाओ कि जिस से उदर की तब्ध शांति हो आज पेट में अति पीड़ा हो रही है॥

झपट—सनाय भंज कर आप गर्म जल से पीवें, ईश्वर ने चाहा तो अभी अच्छे होंगे॥

काणा०—गुरू जी यह झपट दास की औषधी अतीव हानिकारक है अलबत्ता पिट पिट पुट पुट पटर पटर यह शब्द अवश्य सुन पड़ेगा॥

मुक०—बच्चे तूही औषधी बना ला॥

[काणानन्द लाया गुरू जी खा पी शरीर चंगा किया]

सपथदास—गुरू जी आज हम सब दुख क्लेश से निश्चिन्त हो प्रसन्नता से बैठे हैं अब इच्छा है कि आप के मुख कमल से कुछ प्राचीन कथा सुनें॥

मुक०—नहीं बच्चा मुझे अवकाश बिल कुल नहीं है—

(एक ओर से चन्द्रमती विधवा भेष धारण किए शिव शिव करती चली आती है)

(समीप आ गई)

मुक०—अरी बच्ची हाय हाय तेरी दशा देख कलेजा विदीर्ण हुआ जाता है॥

चन्द्र०—हे बाबा जी मेरी प्रारब्ध अति खोटी है हाय दई अपने माता पिता को क्या कहूं जिन्हों ने एक वृद्ध मनुष्य के साथ मुझे वर दिया हाय उस ईश्वर ने बड़ा कोप किया हाय मेरे पूर्व जन्म के पाप थे नहीं तो इस अवस्था में यह गति मेरी क्यों कर हो जाती ॥

गुरु०—च च च च हाय हाय—बच्ची तू अपनी सब व्यवस्था मुझे सुना दे ॥

(चन्द्रमती रोरो कर निम्न लिखित वचन कह रही है)

दोहा ।

गुरू हाय मैं सब कहहुं सुन लीजै धरि ध्यान ।
आयून्यून अव निरखि कै करहिं कोइ कल्यान ॥
वृद्ध आयु के पुरुष सों करिय व्याह नहि भूल ।
मातु पिता पाछे रहहिं कुमारिहिं शूल ॥

चौपाई ।

मनुष एक हरिहर पुर बासा ।
प्रियतम कहैं सकल सुख रासा ॥
भाभी वाहि पुत्र सम जाने ।
निज बालक से अधिकी माने ॥
उत्तम शीलवान अति भारी ।

जब तक जियो कीन्ह नहिं रारी ॥
उमड़ी घटा दिवस यक कारी ।
दड़पत दामिन होत उजारी ॥
मन महं जाय दशा यस ठयऊ ।
चित प्रसन्न करि वन को गयऊ ॥
मोर शोर अरु दादुल काहीं ।
सुन्यो ताहि मध्य वन माहीं ॥
तुरतहि काम मदन उठि जागा ।
कामी बाण मनहु तनु लागा ।
विषय बानि भावजहिं सुनायो ।
मयन आजु मुहिं बनहिं गुनायो ॥
एक व्याह करिहौं मैं अबहूं ।
नारि नाम नहिं लेहौं कबहूं ॥
बोली भावज सुन परबीना ।
अब प्रिय करु नहि व्याह नवीना ॥
आयु वर्ष साठ की भयऊ ।
व्याह तुच्छ क्या मन में ठयऊ ॥
जगत बुरो कहिहै तुम काहीं ।
अपकीरति होइ है सब ठाहीं ॥
मृत्यु होयगी कछु दिन बीते ।
नारि विवाही कैहै कीते ॥

तात ध्यान ज्ञान तुम धारी ।
माया मोह सकल जग टारी ॥
करहु भजन उस ईश्वर केरा ।
होहि सहाय करहि नहिं देरा ॥
मेरी समुझ कहति कछु ऐसी ।
करहु जाय जस भावै तैसी ॥

दोहा ।

प्रियतम बोलो अस बचन कहा पड़ी है तोहिं ।
मना करत है री त्रिया सदृश कीकई मोहिं ॥

चौपाई ।

मोर सुक्ख तुहिं नीक न लागत ।
तर्क एक मध्य अस पागत ॥
यासें पछिं जो तोंसन लीन्हां ।
देखि बैन रोकि मुहिं दीन्हाँ ॥
अब नहीं पछिहौं भूलेहु भाई ।
करिहौं चित्त जैस कछु आई ॥
अस कहि प्रियतम कुटुंब बुलाई ।
कीन्हं बरात हेतु सजवाई ॥
चल्यो बजाय ढोल नकारा ।
गयो श्वसुरपुर भेष सकारा ॥

मोहिं बिवाहि बरहिं ले आये।
कुटुंब बरन मैं होत बधाये॥
कछुदिन दोनों रहे सुचैना।
भीतर मास नास भयो मैना॥
तबहिं पिता को देवहुं गारी।
बिति है बयस मोरि कस बारी॥
दिन प्रति सोच नारि को येहू।
अरु प्रियतम जैहैं यम गेहू॥
तब मैं कैस करुंगी नाथा।
हाय कौन मुहिं देहैं साथा॥
यम की भेट होन अब आई।
काह समुझि बरि दीन्हों माई॥
जो न होत यह ब्याह हमारो।
तौ न मिलत का बर कहुं क्वारो॥
अरे दई रक्षक सब केरे।
पियै न भेज्यो जम के नेरे॥
बूढ़ बाढ़ कैसहु पति मेरे।
दया दृष्टि करि समझहु चेरो॥
रहै अहूात सदा यह नीका।
कबहुं चित्त नहिं होवहि फीका॥
धना बिनय करि बारम्बारी।
कहति प्रभु मैं शरण तिहारी॥

दोहा ।

दिवस एक प्रियतम कह्यो सुन नारी यह बात ।
भ्रात पास मैं जात हौं मत करियौ उत्पात ॥
मास दुहिक में आय हौं लग्यो कार्य्य इक आनि ।
हे प्यारी मों मन बशी उचित कहै तूं बानि ॥
बिना हुक्म तेरे प्रिया उठत न पग है मोर ।
दे आज्ञा अब तुरतही चलौं नाम ले तोर ॥
पूंछि नारि से नर चल्यो गयो बन्धु के पास ।
मारग में व्याकुल भयो मन कीन्हीं यह आस ॥
भ्रात कार्य्य को सिद्ध करि तुरत लौटि घर जांव ।
सच कीन्हीं जैसो कह्यो धर्यो आय गृह पांव ॥
कह्यो मोहिं से अब सुनौं अब न जियब हम तात ।
आदि माघ के मास में ज्यों न रहे तरु पात ॥
आरत सुनिकर अस बचन पिया बहुत बिलखात ।
रोय रोय सब सन कहति पीय गात तजि जात ॥
हाय हाय अब कोइ इन्हें जल्दी देहु ज़मीन ।
नहीं प्राण या खाट पर छुटि जैहैं मन मीन ॥
सबन उतार्यो खाट से अरु धरती पौढ़ाय ।
लेय चले समशान को कफ़न आदि ओढ़ाय ॥

चौपाई ।

फूंकि फांकि पुनि घर को आई ।
तब अति रोय रोय पछिताई ॥
करैं बुटायो व्याह न भूली ।
पिता मातु दै देवहि शूली ॥
सोई नीक धरम सधि जाई ।
का करि व्याह दुक्ख अस पाई ॥
पंडितहुन को देवहु गाली ।
जनम पत्री आदि संभाली ॥
भरिकर चित्त पिता माता को ।
काटहिं गला अबल बाला को ॥
भला कबहुं उनको नहिं होई ।
विधी कुंडली जिन ने बोई ॥
झूठ जाल से द्रव्य कमावैं ।
चन्द्रमती सब को समझावैं ॥
आज जाल के परयो न फन्दे ।
हैं सब उस मालिक के बन्दे ॥
जो कछु करै करहि करतारा ।
दूजो सकत टारि नहिं बारा ॥

(ऐसे वचन चन्द्रमती के सुन कर पत्थर का हिया भी दाड़िम की तरह दरकने लगा और जीव जन्तुओं में पची तक आंसू बहाय २ रो रहे हैं।)

मुख०—हाय २ बच्ची तेरे कोमल गात को निरख और मधुर बाणी को सुन कलेजा फटा जाता है क्या करूं परतंत्र हूं (ईश्वर की महिमा अपूर्व है)

(चन्द्रमती चलीगई)

छठा अंक आरम्भ हुआ।

(एक ओर से कई सखियां एक से एक स्वरूपवती पुष्प वस्त्र पहिने हुए विहार बन में आकर श्रीकृष्ण जी को विसूर २ सुध करने लगी)

(रंग भूमि में विहार बन भी रचना चाहिये)

पहिली सखी भद्र शालिका गाती है।

दमकत दामिन है गगन घटा बहु कारी।
विन श्याम पड़त नहिं चैन रैन भै भारी॥
चहु ओर करत हैं शोर मोर दिन राती।
पपिहा के बोलन सुनत हुक जिय आती॥

करतीं गोपी सब सोच खड़ी इकठौरी ।
हम सगरी भयीं मुरारि दरस बिन बौरी ॥
अब बीति चल्यो असाढ़ उमिर है बारी ।
है जोग लियो उन जाय मदन बनवारी ॥
(बिन श्याम पड़त नहिं)

सखि पहिर पहिर भूषण सब नारी ।
छम छम करत चलें दरबारी ॥
ओढ़ि कुसुंभी चीर हिंडोला झूलैं ।
करैं तीज त्यौहार शोक सब भूलैं ॥
हम गोपिन को बदो रोइबो आली ।
करैं हाय कैसी बनमाली ॥
अब बीति चल्यो सावन सोच चित भारी ।
चिन्ता करि २ भस्म उड़ावत क्वारी ॥
(बिन श्याम पड़त नहिं)

झहरि झहरि जल बरसि रह्यो बिरज उतराई ।
उमड़ी घटा देखि हिय फटा कहाँ गयो जदुराई ॥
क्या हुई खता अब करहु अता खता दासिनकी ।
हाय हृय मच रही सकल पुरबासिनकी ॥
आनि मिलो अब श्याम लगा लूं छतियां
विरहानल की पीर सही ना जतियां ॥

अब बीति चल्यो अदौन नयन जल जारी ।
पोंछत २ आंसु भींज गये तन सारी ॥
(बिन श्याम पड़त नहि)

गरज बदरा घोर चहूंदिस विकल भामिन ।
अब श्याम विन कटै क्यों कर गम कि जामिन ॥
त्यागि सनेह भयो वे नेह करूं क्या मोहन ।
आय झपटि मिल जाव श्याम व्रज सोहन ॥
गोपी बिसुर २ रो रहीं खड़ी मतवारी ।
हंसत २ पुनि लियो उठाय गोद बनवारी ॥
अति अनन्द सब गोपी वृन्द आरती उतारी ।
कमल चरण सब शरण भई हैं नारी ॥
(बिन श्याम पड़त नहि)

(दूसरी सखी चन्द्र बदनी गाती है)

अषाढ़ मास त्रास अति होय ।
श्याम खबरि नहिं लावत कोय ॥
गोपी मिलि २ कहतीं रोय ।
अब बिष खाय रहें हम सोय ॥
हम तन कीन्ह बहाना श्याम ।
कछु दिन बीते अइहैं धाम ॥
अब कस भूलि गये हो राम ।
तुम बिन मोहि जलावत काम ॥

सावन सोच बड़ो चित माहिं।
सब सखियां मिलि झूलन जाहिं॥
करि सिंगार मिलि पीतम काहिं।
हंसि २ पुनि उनके लिपटाहिं॥
मैं तो श्याम नाम हिय धारि।
रोय रोय सोचहु मन मारि॥
अबहूं आय मयन को टारि।
हरहु शोक तुम मदन मुरारि॥
भादौं जल उमड़ो चहुं ओर।
श्याम दरश पावौं मै तोर॥
याही मन चाहत है मोर।
गल लिपटी बहियाँ झक झोर॥
खड़ी हो हो सब देखैं राह।
मोहन मिलन की लागी चाह॥
नारि कुबिजिया कीन्हों काह।
जो न मिलैं मुहिं ब्रज पति आह॥
कार मास प्रभु ब्रज में आय।
सब गोपिन को गले लगाय॥
हंसि २ कहैं बहुत समुझाय।
करम लिखे ते गये बिहाय॥
लै लै सुबरन आरति थार।

गोपी करहिं मंगलाचार ॥
देव सुमन बरसावत झार ।
कमल चरण है अजब बहार ॥

(तीसरी सखी शिवमती गाती है)

भए बे दर्द मदन बनवारी ।
गोपी करहिं सोच मिलि भारी ॥
लगा अषाढ़ मैंने जानी ।
उमड़ी घटा बढ़ै मन मानी ॥
धाय बदरा सब ओर आनी ।
मोरिल कूक सुनावत बानी ॥
छहरि घहरि घहरन लगी बदरा काले छाय ।
हंस पीक बड़ खुशी मनावत दड़पत दामिन धाय ॥
भरर भरर गिरता है बारी ।
गोपी करहिं सोच मिलि भारी ॥
करि सावन में रति का भेष ।
सखियाँ मगन बलम के देश ॥
खुशी हो हो कर पूजैं शेष ।
हमें बड़ो भारी अन्देश ॥
पहिरि २ भूषण सबै छम छम शब्द निहार ।
जहं हेरे तहं यही देखलो मिलि सब करैं बिहार ॥
खुशी में मगन सखी सारी ।

गोपी करहिं सोच मिलि भारी ॥
भादौं लगी झड़ी है नीर ।
मयन बदन मारत है तीर ॥
आय हरो मोहन तुम पीर ।
सूनी भूमि लगत है भीर ॥
घर घर में आनन्द भयो मिलि जुलि पीतम संग ।
लपटि झपटि कर सबै सहेली किये अनेको रंग ॥
चैन चित उन को है भारी ।
गोपी करहिं सोच मिलि भारी ॥
शुरू क्वाँर श्याम सुध आती ।
अब कटै नहीं गम की राती ॥
करूं हाय कैसी मद माती ।
जान जिस्म से है जाती ॥
तब तक मदन मुरारि ने बन्सी बाजि बजाय ।
नाच नाच कर सबहिं रिझायो गले लीन्ह लिपटाय ।
कमल चरण आये बनवारी ।
गोपी करैं सोच मिलि भारी ॥

मु०—वाह २ मारे प्रसन्नता के मैं अपने आपे में नहीं हूं इस समय यही ध्यान बंधता है कि मानो राजा इन्द्र ही की भाँति पुष्प रत्नासन पर बैठ मग्न हो मधुव्रता राग सारंग धुनि इत्यादि पै लुभाय रहा हूं॥

(सखी ने यह सब विषय पुष्परत्नासन का पूछा)

मु०—बच्चो सावधान हो कर सुनो मैं सब व्यवस्था यथोचित कहे देता हूं॥

(अथ कथारंभः)

दोहा।

राव इन्द्र अस मन ठयो खेलन जाँहि शिकार।
शेर सिंह से जो नवहिं क्षत्री धर्म धिकार॥
समुझि सोचि चित में बहुत गये सहायक पास।
बन सुन्दर को जात हम गृह कीजो तुम वास॥

चौपाई।

लै सेना डंका बजवाई।
चल्यों राज अति मोद बढ़ाई॥
दिवस सप्त पहुंचे बन माहीं।
जीव जंगली यूथ लखाहीं॥
दक्षिण ओर सोह यक धामा।
रहति तहां यह सुन्दरि भामा॥
दिव्य मंजरी नाम सुहाई।
निरखि ताहि मुनि देव लुभाई॥
बनो गात है अति ही नीका।
रतिहू रूप करति बहु फीका॥
तहूं प्रशंसा करि कछु देहूं।
सत्य मिलत नहिं उपमा केहूं॥
बिना रूप के बरणन कीन्हे।
क्योंकर मनुष रसिक सुख चीन्हें॥

आयु बरस बारह की भाई ।
हंसी चाल गज चन्द्र लजाई ॥
भूषण पुष्पज रचे शरीरा ।
मृदु बाणी हिय बेधहि तीरा ॥
गौर अंग पीत है सारी ।
पीतहिं बस्त्र सकल तनु धारी ॥
बुलाक नासिका सोहै कैसी ।
मारुहिं प्रीति काम रति जैसी ॥
घूंघर वाले भावहिं केशा ।
अति ही नीक बनो सब बेशा ॥
बहुत कहब हमें नहिं सोहत ।
रसिक जनन को सब है जोहत ॥
तासे थोरी कहहुं बनाई ।
अग्रिम हाल सुनौ अब भाई ॥
छोड़ि अहेर रूपवति धामा ।
गये राव अति मगन सुठामा ॥
बहुत प्रसन्न देखि कर बामा ॥
कहि न जाय शोभा वहि कामा ॥
इक टक नयन भये उन केरे ।
मिली परस्पर होइ कै नेरे ॥
दोउ बैठे सिंहासन माहीं ।

नारद आनि कह्यो शिव पाहीं ॥
शिवहु चित्त पाप कछु धाई ।
लै डमरू पहुंचे वोउ जाई ॥
ब्रह्मा विष्णु आदि सब देवा ।
इनहु से नारद कहि सब भेवा ॥
करिकै साथ उन्हें लै गयऊ ।
शिवहिं देखि मगन अति होऊ ॥
कहहु नाथ और कछु रूरा ।
तुरतहि करौं कार्य्य सब पूरा ॥
शिव बोले रावण को लाओ ।
पठवो यज्ञ जो मारग पाओ ॥
कुटुंब सहित रावण को लाई ।
नारद आय कह्यो सिर नाई ॥

दोहा।

सर्ब समाजहिं निरखि कै दिव्य मंत्रि भ्रम कीन्हं ।
वस्त्र गात उत्तम पहिन हाथ तंबूरा लीन्ह ॥
पुनि गृह से बाहर निकरि कहन हेतु कछु राग ।
मध्य सभा में प्रगट ह्वै राग अलापन लागि ॥

सुनत अलाप चुप्प सब भयऊ ।
जो जस बैठ सो तैसीहि रह्यऊ ॥
मुख से निकसहि तनिक न बानी ।

यही आस सब हिरदै ठानी ॥
कछु आरम्भ करहि अब गाना ।
सुनहिं लगाय चित्त अरु काना ॥
दिव्य मंजरी गावन लागी ।
सब की बिथा तुरत ही भागी ॥
मोहि मोहि झूमहिं सब लोगा ।
कमला चरण भनत यह जोगा ॥

दोहा ।

सब के चित ढीले भये सुनि २ उत्तम बानि ।
अपन आप को होश नहिं डूबिगये रसखानि ॥
राव इन्द्र डारे अनत महादेव कहिं अन्त ।
ब्रह्मा हरि लोटे फिरहिं जोउ कहावत सन्त ॥
होत होत पुनि भोर भा धाम सुभामा जाय ।
हाय हाय सब मिलि करहिं अब कस जीवन पाय ॥

चौपाई ।

दामिन सदृश् करत प्रकाशा ।
दिव्य मंजरी गई अकाशा ॥
सब देवहु निज घर को धाये ।
दिव्य मंजरी मोह रमाये ॥
कहहिं परस्पर वे मिलि भाई ।
दिव्य मंजरी स्वर्ग सिधाई ॥

अब हम करहिं उपाई कैसा ।
जाते मिलहि नारि यह वैसा ॥
हंसी मनोहर मूरति नीकी ।
घातक भयी हमारे जी की
इन्द्रहु लौटि धाम को गयऊ ।
चित में मोह नारि को ठयऊ ॥
देख्यो स्वप्न उच्च यक राता ।
पुष्पासन सोहहि ममगाता ॥
तब अति नीक प्रतिष्ठा होई ।
दिव्य मंजरी मिलि है वोई ॥
मैं अबहीं सब सभा रचावों ।
भाँति २ परियाँ बुलवावौं ॥
नौबत जगह २ भरवाई ।
सकल समाज सुरन भरवाई ॥
रचि २ कै सब को सजवाऊं ।
पाछे नृत्य ठाट करवाऊं ॥
दिव्य मंज्रिहू नचिहै आई ।
सब्ज़ परी आदि वो उठाई ॥

दोहा ।

सकल समाजहिं निरखि कै पुष्पासन पर जाय ।
बैठि कही आज्ञा थकी करहिं नृत्य सब आय ॥

(नृत्य होने लगा और दिव्य मंजरी भी स्वप्न में देख पड़ी)

(सब लोग बोल उठे)

गुरू जी पुष्पासन की सब व्यवस्था हम लोगों ने समझी पर अब आप इस कथा को नाटक रूप में कर दिखाइये तो स्पष्ट ज्ञात हो जावे ॥

मुकु०—अच्छा बच्चो देखो मैं नाटक भी किये देता हूं ॥

(मुकुन्दर गिरि ने अच्छे प्रकार से नाटक किया)

---

७ अंक आरंभ हुआ ।

(एक ओर से बाबा बिजयानन्द जी वाह वाह करते यह पढ़ते हुये मुकुन्दर गिरि के पास आ पहुंचे)

दोहा ।

पार ब्रह्म परमात्मा । सर्ब सृष्टि का स्वामि ॥
सिरजन हार जानहु उसे । जग सेवक अनुगामि ॥
पोषण पालन है करत । रचे सखो सब साज ॥
दया धर्म पूरण सदा । है अनादि अधिराज ॥
यह उपयह औ भानुहु । और जगत विस्तार ॥

रच्यो पदारथ भौत की । लोक हेतु निस्तार ॥
कृपा दृष्टि से सबहिं को । रही बनायो तात ॥
अपने अपने थान पर । नित सोहैं दिन रात ॥
बरणन नहिं कोइ करि सकत । जीभ कोटि मुख धार ॥
युग ६४ खोजी करहि । तहू न पावहि पार ॥
मैं क्यों कर कुछ कहि सकौं । बुद्धि तुच्छ है मोरि ॥
सरिता भरी अथाह है । घट थक लेवहुं बोरि ॥
हाथ आय जो लगि गयो । गहहु तासु हौं राय ॥
बून्द २ जो है गिरत । लियो सत्य बहि पाय ॥
बोझ में अब ज्ञान नहिं । केहि प्रकार कहुं भाय ॥
वस्तु निरख नूं भौतिकी । तौ कदापि बन जाय ॥

मुकु०—वाह २ बाबा जो जो बन जाय वह सब बना कर मुझे सुना दीजिये धन्य मेरी प्रारब्ध कि आप सदृश महात्माओं के दर्शन सहज ही में पागया ॥

विजयानन्द—अच्छा तो सुनो—मैं प्रथम स्थान रचने की शोभा वर्णन करता हूं ॥

चौपाई ।

सप्त खण्ड का गृह रचवाई ।
कोटि खम्भ तामें लगवाई ॥
द्वारदरा सब हेतु सजाई ।
निरख इन्द्र हू रहे सकाई ॥

झाड़ फनूस जनगिनंत छाजैं ।
हीरा पन्ना माणिक भ्राजैं ॥
सोह तड़ाग तहाँ यक भारी ।
खिल रहैं जहाँ कमल झारी ॥
हंस पच्छि बोलिया सुनावैं ।
हृद आयु अवधूत सुहावैं ॥
छतैं तनी होवहिं अति नीकी ।
रहै छुब्बना तनिकौ जी की ॥
चन्द्र प्रकाश छाहि चहुं ओरा ।
मोरिल कीर करैं बहु शोरा ॥
रहै चाँदनी छिटिकि गुसाईं ।
सरिता बहै सिंधु की नाईं ॥
होहि विराव धाम के पासा ।
सुवरण फाटक सोहै खासा ॥
बीच बीच मकाश कराओ ।
रत्न सबै तामें जड़वाओ ॥
यहू से नीक सकल बनि धामा ।
पर है यह गृहस्थ को कामा ॥
तासे थोरो कछुहु बनाई ।
अभिमक्षाम सुनौं अब भाई ॥

सुक०—ये शोभा आप क्यों वर्णन कर गए म कुछ भी नहीं समझा ॥

विजया०—जो मनुष्य कि ईश्वर का साधन (अभ्यास) करते हैं उन के हेतु यह स्थान कहा गया है—

मुक्त०—तो बाबा जी साधनादि का विषय मुझ को भी बतला दीजिये ॥

(विजयानन्द कहता है)

दोहा ।

तुच्छमती अनुसार मैं । सब कुछ कह्यो सुनाय ॥
साधनादि का विषय हू । तुम कह देहुं गुनाय ॥

(चौपाई)

सोय उठौ जबहीं तुम भाई ।
लै लोटा मज्जन करि आई ॥
पुनि नहाय कर विमल शरीरा ।
पहिर बस्त्र जो चाहिं खरीरा ॥
ऊपर कहे धाम में जावो ।
बैठि एकाँत आसनी बिछाओ ॥
प्रथम गात को बहुत फुलाई ।
ठाढ़ होहु पुनि देहु डुलाई ॥
रद से रद अधर में अधर मिलाई ।
यों ब्रह्म को हृदय जमाई ॥
नयन मूंदि कान दे हाथा ।

बैसहि बैठि नाव कहि माथा ॥
ओं ब्रह्म को हिय में धारी ।
नाम लेहि पुनि बारम्बारी ॥
फिर स्वासा को ऊपर खींचे ।
शनैः शनैः वहि लावै नीचे ॥
घण्टा अर्द्ध बीत जब जावे ।
सर्व गात वायू फैलावे ॥
नाहि चढ़ाय नाभि में धारो ।
वोह्र उच्च हृदय में पारो ॥
पुनः भृकुटि बिच करिये ध्याना ।
मस्तक पहुँचि मिटत जग ध्याना ॥
तनिकौ मोह रहै ना लेशा ।
हाड़ मान्स जिव होय निरेशा ॥
घण्टा अर्द्ध नियम सधि आई ।
तब प्रकाश एक देहि दिखाई ॥
पृथ्वी आदि अन्त है भानू ।
तहं लग नाद शब्द है ध्यानू ॥
अनेक शशी अरु भानि दिनेशा ।
सुनहिं ध्यान अति उत्तम वेशा ॥
जस जस करहु ध्यान चित कूपा ।
तस तस पड़हिं समुझि बहु रूपा ॥

घण्टा बिन्यति चित्त रमावै ।
तहीं ब्रह्म करि ध्यान समावै ॥
ता सन त्रिमय करहि मन माहीं ।
तुम हो रक्षक जगत सदाहीं ॥
तुम हो अमर अनादि महेशा ।
तुम हो जनक अपार नरेशा ॥
तुम हो निर्विकार नीरोषू ।
तुम हो नृपति एक निर्दोषू ॥
तुम हो अपरम्पार गनेशा ।
तुम हो सत्य नाम लोकेशा ॥
तुम हो काम क्रोध के घालक ।
तुम हो सकल सृष्टि के पालक ॥
तुम हो अजर और अविनाशी ।
तुम हो पिता दीर्घ सुख राशी ॥
तुम सब चित्त के आनन्द कारे ।
तुम हो घट घट सदा सुखारे ॥
तुम हो बीर अती बलवाना ।
तुम हो आदि शक्ति भगवाना ॥
तुम हो व्यापक और पुनीता ।
तुम हो ज्ञान महा अधिनीता ॥
तुम हो धर्म विवेक प्रचारा ।

तुम हो जग पति सृष्टि सवारा ॥
तुम हो सर्व थान सब बाथा ।
तुम हो भुवन चतुर्दश नाथा ॥

(मुकुन्दर गिरि बोल उठा)

मुकु०—बाबा जी आप ने तो मुझ मूढ़ को सज्ञान कर दिया अब इस समय हम सबोंका चित्त अत्यन्त ही प्रसन्न है आप की प्रशंसा कहां तक करें—बाबा जी एक शंका बड़ी भारी उत्पन्न हो गयी है—

बिजया०—कहो क्या शंका है ? ॥

मुकु०—बाबा जी जो सप्त खण्डा गृह रचवाने का सुभीता न हो तो कहां मे बनें और क्यों, कर ईश्वराभ्यास हो सके—

बिजया०—देखो यह ईश्वराभ्यास तो सर्व साधारण ही हो सकता है गृह व स्थान रचने की कुछ आवश्यकता नहीँ—मेरे कहने का प्रयोजन यह है कि इस सृष्टि में अनेक प्रकार के मनुष्य अर्थात् कोई जुआरी कोई तमाशबीन कोई व्यभिचारी इत्यादि भरे हुये हैं और यही लोग बहुत सा द्रव्य कुकर्म में व्यय करते हैं वह द्रव्य अब सुकर्म में लगे, अच्छे २ स्थान धर्म गृह बनें, तो द्रव्य

व्यर्थ न जावे इस कारण सुस्थान (जहां अभ्यास किया जावे बनाना कहा—

मुक्त०—सत्य है पर यह बतलाइये कि अभ्यास क्यों किया जाता है और किस का और वह कहां है जिस का अभ्यास करें ॥

विजया०—अभी और आस के योग से अभ्यास शब्द बना है अभी उपसर्ग प्रधानता वाची और आस शब्द भरोसा का अर्थ देता है अर्थात् भरोसा करना प्रधानता का इस अभ्यास पद से उक्त अर्थ सिद्ध होता है इसी कारण ईश्वराभ्यास किया जाता है वह ईश्वर सर्वत्र है ॥

मुक्त०—मैं सब समझ गया पर यह संदेह न मिटा कि ईश्वर सर्वत्र है, कदाचित है तो प्रतिमा पाषाण और हमारे हाथ में भी होगा और जो हाथ में है तो उंगली इत्यादि के काटने पर पीड़ा किस को होगी ?

विजया०—सत्य कहते हो—पर वह परमात्मा परब्रह्म इस सृष्टि में मिला भी है और जुदा भी है ॥

मुक्त०—बाबा जी आप ने तो प्रयोजन सिद्ध करने के हेतु ईश्वर को दोनों में मान लिया ॥

विजया—देखो—वह परमात्मा परब्रह्म ईश्वर सूर्य्य की भांति सृष्टि से जुदा है और धूप की भाँति सब में प्रविष्ट है अब कहो पीड़ा तुम्हारे होगी या सूर्य्य के ॥

मुक्त०—माता जी आप ने जो कुछ कहा सो मैं सब समझ गया—अब कृपा कर यह बताइये कि जो कुछ मनुष्य करता है वह परमेश्वर ही करता है मनुष्य को दखल नहीं कि तिन का तक टाल सके यह सत्य है या झूठ॥

विजया—कदाचित् इस समय कोई मनुष्य आकर बे अपराध तुम को मारने लगे तो इस के पलटे में क्या करोगे?

मुक्त०—बे अपराध कोई चूं तक नहीं कर सकता कदाचित करे तो करने का फल भी दे दूं और जो वह थप्पड़ मारे तो मैं ऐसी लाठी धमकूं कि खोपड़ी चकना चूर हो जावे—

विजया०—तुम ईश्वर को जानती हो या नहीं?॥

मुक्त०—उस ईश्वर को सब कोई जानता है उसी की यह माया है कि सूक्ष्म बीज से कैसे बड़े २ वृक्ष बड़ और पीपल के हो जाते हैं॥

विजया—सत्य है—अब यह तुम कहो कि अपने ईश्वर को अन्यायी और छली निंदक तो नहीं समझती और कभी क्रुद्ध तो नहीं होती॥

मुक्त०—भला मैं ईश्वर पर क्रोध करूंगा? मराल को यह शक्ति कहां कि पर्वत उठा कर फिर चल सके—

विजया—देखिये जब कि सब कुछ परमेश्वर ही करता है तो वह थप्पड़ भी तुम्हारे परमेश्वर ही ने मारा तो

इस दशा में ईश्वर अन्यायी ठहरता है क्योंकि बिना अपराध थपेड़ मारा परन्तु उस में अन्याय कदापि नहीं दूसरे तुम बदले में थप्पड़ वाले को मारने कहती हो सो ईश्वर ही को मारोगी और यह सारा तुम्हारे क्रोध का कारण है अतएव तुमने ईश्वर हो पै क्रोध किया—

सुक०—बाबा जी जितनी बातें मेरे पेट में आज तक की समाई हुईं हैं अब आप के दर्शन से सब शुद्धता को प्राप्त होती जाती हैं—बाबा जी यह सिद्ध हुआ कि परमेश्वर कुछ नहीं करता सब मनुष्य ही करता है—

विजया—परमेश्वर तो कर्त्ता कहा ही जाता है पर कार्य्य कारण के भेदों को सोचो कि ये दोनों आपस में क्य सम्बन्ध रखते हैं॥

सुक०—हाँ हाँ बाबा जी अब खूब समझ गया—बाबा जी पाप मिट सकता है या नहीं बहुधा मनुष्य अघमर्षण सूत्र इत्यादि पढ़ा करते हैं सो क्यों—

विजया—जो परमेश्वर किसी उपाय अर्थात् पुण्य धर्म से पाप को शान्ति कर दे तो अन्यायी हुजो और झूठा अविश्वासी कहलावे क्योंकि एक बात जो कानून के अनुसार नियत की गयी फिर उस ने उस को मेट दिया आईन में भेद हो गया तो ईश्वर की बात का विश्वास नहीं रहा और वह अन्यायी ठहरा इस कारण आप

का कथन अतीव असंभव है—अघमर्षण सूत्र से ईश्वर की विनय निर्भर है इस का पढ़ना अवश्य अच्छा है ॥

मुक्त०—राजाओं का क़ानून ज्यों पलट जाता है वैसे ही ये भी समझो॥

बिजया—छी छी छी—तुमने ईश्वर और राजाओं में कुछ भी भेद न रक्खा देखो ईश्वर आद्यंत है आगे पीछे अर्थात् भूत वर्तमान भविष्य तीनों काल की होनी जानता है पर यह शक्ति राजाओं में कहां वे क़ानून समयानुसार अवश्य ही पलटेंगे—

मुक्त०—बाबा जी इस संसार में जन्म लेकर जहां तक हो सके धर्म ही करे पर इन्द्रियाँ अति प्रबल हैं इसी कारण अधर्म में चित्त रम जाता है मरने पर वही यमराज आँख दिखा २ कर मारते पीटते और असह्य दंड देते हैं॥

बिजया०—इन्द्रियां तो अपने वश हैं उन से अधिकार है कि पाप करो या पुण्य और जो तुमने दंड विषय में कहा वह बड़ी अज्ञानता है देखो जब जीव शरीर से निकल कर बाहर हो गया तो यमराज दंड किस स्थान पर देगा शरीर तो रहा हो नहीं और दंड शरीर ही कर के होता है। कदाचित मान भी लेवें तो परमेश्वर सहायक रखता है उसे सर्व शक्ति नहीं कि अपने आप कुछ कर सके—

(बाबा विजयानन्द जी अन्तर्ध्यान हो गये)

---

८ अंक आरम्भ हुआ।

(एक ओर से विदूषक को आते देख मुकुन्दर गिरि बोले)

मुकुन्दर—कहो विदूषक आज कल तुम कैसे दुर्बल हो गये हो ?

विदूषक—सुनिये एक ग्राम आजरा है। वहां बाजरा बहुत पैदा होता है। एक दिवस मैं अपने स्त्री की माई की दाई सहित गया। तो तमाशा देखा नया। कि एक मृगी बन मनुष्य की खेदी हुई भागती हांफती कुलांग मारती उछरती डबल दौड़ से चली आती है। और एक कागा। जात का नागा। बड़ा अभागा। काला साला। समझा अपने को बाला। ऐन सींग के ऊपर मंडराता चला आता है। तथा राजा के भी। जो बाजा बजाता। कटक सजाता। भमभुक भमभुक करता। चिहिं भिहिं बनता। बिन पानी मिट्टी में सनता। अजब स्वांगी। गल् ठपकी मारता। भिंन भिंनाता। गंडा और रंडा। एक प्रकार का झंडा धारण किये बना मुचंडा। साढ़े तीन तीन गज् पर कदम रखता है। कभी वही

कागा सिर में मिष्ठान्न दोना के धोखे । टोना मार मार। फिर अपने अद्भुत स्थानैं पर आ पहुंचता है । ऐसी दशा देख । दइया बोली (कि भइया । देख यह क्या चरित्र है । इतना कहना था । कि मेरे मुख से । सुख रूपी । सूपी समान । पकौरी हुई । ऐसी बानी बेताली । झट पट सट दे । निकल भगगई । कि होने दो । हमें तुम्हें क्या करना । जब मरना जरना होगा । देखा जायगा । सत्य करके दुखित अति समझा जायगा । बचा लिया जायगा । कहांतक कहैं । सब दुख सहैं । दोनों भागरहे। हम दाई सहित पछाड़ रहे । सुन बे कागा । सुन बे कागा । पंछी से मैं भी आताहूं भागा । जोड़ छोड़ दे । नहीं तो मुंह तोड़ । सिर फोड़ । हराम खोड़ । जंगली घोड़ा । जीता न छोड़ेंगे । कागा । यह सुनते ही भागा। और साईं । मेरे दाईं बाईं ओर । कूकर की नाईं । कांव कांव । भांव भांव करने लगा । बड़ीही रिस लगी। तब तक एक बंदूक दगी । वह बिना कहे सुने । सिर धुने भगा । तबतक एक बकरी । ककरी चबाती । मिमियाती पगुरियाती । मेरे असन बसन कचरती । उचक उचक कर देखती । कि कोई अनुष्य मनुष्य तो नहीं बैठा है । जो अगदा में । बगदा कर मारने लगी । उस को देख मैंनें हलाहल किया । वह भग गई । थोड़े स-

मथ में देखा कि एक गलार मलार गाती। छाती पै ब-
च्चे को लटकाये ; भटकाये भटकाये फिर रही है। त-
माम पखेरू जखेरू और भखेरू सहित उसकी पेशवाई में।
हाज़िर व नाज़िर हैं। कोई कहते कि। शामियाना ल-
गवा दो। नाच खड़ा करवादो। कोई कहते कि नहीं
नहीं। तोपों की बाढ़ खतम हो लेने दो। कोई कहते
कि चुप रहो चुप रहो शोर मत करो। महाराणी जी गुल
सुन लेंगी ; तो भूल जायंगी। कोई कहते कि यह स्थान
अच्छा। ठहरने के योग्य है। डेरे न पड़ेंगे। तो बखेड़े
में कब तक खड़े खड़े अकड़ें। जकड़ेंगी। इतने में बड़े
ज़ोर शोर से घोर शब्द होने लगा। सब को धरना उ-
ठाना भूल गया। तितर बितर। तीन तेरह हो। इधर
बिखर गयीं। उसी समय एक उल्लू आया। मन का
भाया दोस्त पाया। साथ बैठ कर खाया पीके मज़ा उड़ा
या। बोली दाई सुनने भाई। उल्लू भुल्लू क्या करूं
मन में डरूं तुरतें मरूं। तू आया अब परूं। रात बा-
त सात भयीं। सो तो बतलाय दई। कहे उल्लू सुन
उठल्लू। मैं हौं बीर बड़ा बल मल्लू। तू सोवे में खोऊं।
क्या तेरा नौकर हूं। जो भोजन हो कराये पर हलाल
हो हुकुम बजा लाऊं। जो जाता हूं। शक्कर मिश्री रोज
खाता हूं। जो अब्ब तब्ब करता है। चार लातें लगा-

ता हूं। ऐसा सुन दइया ने मइया कर। मेरे पइयां पड़। बलइयां ले कहा कि। रे भइया। नइया पर चढ़ जल्द ही भग चलो। हमने ऐसाही किया। फिर आगे न जिया। क्योंकि एक घोड़ा का कोड़ा। मय जोड़ा अपने सवार के मेरे पास गिर पड़ा। उस की धमक व लमक से आँखें झपक गयीं। दाढ़ें मटक गयीं। इस से घबड़ा गया। सहायक कोई न देखा। यह लेख ध्यान व ज्ञान में आ समाया कि। सब कुछ कमाया। पर काल पड़े कोई ठाढ़ें ही आड़े न आया। मैं संसार के माया भ्रम में लीन था। सो आज मलीन होगया। चित्त की मलीनता भी ईश्वरेच्छा से स्वच्छता को प्राप्त होने लगी। विशेष क्या कहूं—

मुक्ष०—ओ हो हो तभी तुम्हारा शरीर इस दशा को पहुंचा है॥

विदू०—और कुछ पूंछ लो—

मुक्ष०—नहीं नहीं अब न पूंछूंगा एक एक बात में तुम इतना २ गाथा कथते हो तो दो चार बातों में बहुतही कथोगे—

विदूषक—अलबत्ता इस में क्या संदेह॥

मुक्ष०—अच्छा तो तुम कोई गाना गाकर हमें प्रसन्नकरो॥

विदूषक—अच्छा मृदंग मंजीरा करताल सारंगी मंगा लो मैं गाना सुना दूं—

[सब बाजा मंगाये गये]

[विदूषक नाच २ और ताली बजा २ कर गाना सुना रहा है]

[गाना राग चौपाइयों का भजन में]

मन मत भूलि रहो यहि लोका ।
अन्त काल करि पड़हो धोका ॥
नहिं व्यापौ अरु करहु निबाहू ।
सृष्टि सीक दैवो नहिं काहू ॥
जग में सुख दुख नित हैं भाई ।
ऋतु की भाँति समुझ हिय लाई ॥
जियब मरण है होत सदाहीं ।
भ्रात मात पितु संग न जाहीं ॥
सुत दारा सब रोवहिं ठाटी ।
चलि भे हाय हमें दुख गाटी ॥
मित्र मिलापी जितने साईं ।
जियत मिलहिं नारिहु धाईं ॥
मरे बस्त्र सब लेहिं उतारी ।
साथ नहीं कोइ जावन हारी ॥
जब तक जियहु तबहिं लगि नेहा ।
फिर सब कहहिं त्यागि गये देहा ॥

रौरव नर्क जबहिं तुम जइहौ ।
कौन सहायक वहं निज पइहौ ॥
तातें करहु ब्रह्म को ध्याना ।
होंहि दयालु बड़े अति ज्ञाना ॥
कमल चरण मति रूप बतावें ।
मुक्ति हेतु यह विषय लखावें ॥

[खूब दोहराय २ तिहराय विदूषक ने गाया]

मुक्त०—वाह वाह तुम ने खूब ही गाया राग मन मेरे को भाया ॥

विदू०—अब तो मैं जाता हूं ॥

[विदूषक चला गया]

सपथू०— गुरू जी आप भी कुछ सुनाइये आज यह अवसर अति उत्तम है धन्य प्रारब्धि औ हो भाग्य—

मुक्त०— अरे बच्चा ऐसी ऐसी उत्तम बातें सुन चुका तौ भी इच्छा पूरण नहीं हुई ॥

सपथू०—हां मैंने जाना कि आप इन्द्र का विषय कह चुके हैं ॥

मुक्त०—नहीं नहीं और सब लोगों ने जो कहा ॥

सपथू०—तौ क्या हुआ आप को अभी कुछ और सुनावें ॥

मुक्त०—बच्चा सुनने और समझने से कुछ नहीं होता करने से होता है ॥

सप०—अच्छा करूंगा कहिये बतलाइये ॥

मुक०—नहीं करोगे कदाचित करोगे तो अपना प्रयोजन देख लोगे ॥

सप०—आप के चरणोंकी सपथ आज्ञा उलङ्घन कदापि न होगी ॥

मुक०—अच्छा हम सब लोग अपने २ घर जाया चाहते हैं॥

सपथूदास—गुरू जी मेरी इच्छा नहीं थी कि आप जावें पर अब बचन हार चुका हूं इस कारण जाइये मेरे अपराध को सब लोग चमियो और सदैव क्षपा बनी रखियो ॥

[सब लोग चले गए]

[कंजरी और सपथूदास रह गए]

सपथू०—देखो प्यारी साथी का भी स्नेह प्रबल है इस समय गुरू जी इत्यादि की सुध आने पर बड़ा मोह लगता है ॥

कंजरी—होई जान देव—हम तुम दोनों जनें मजे मारैं न बैठि के ॥

सपथू०—ऐसा अब न कहो संगति का रस हम तुम दोनों पा चुके ॥

कंजरी—तो का कहौं ॥

सप०—य ी कहो कि वृद्धावस्था है इस कारण परमेश्वर का ध्यान करो ॥

कंजरी—बुढौ तुम्हार ध्यान मारो मारो फिरि है इयो बताओ कि मोरि उमरि कैसे कटि है ॥

सप०—हम से तो सिवाय भजन के और कुछ होही नहीं सकता ॥

कंज—काहे नाईं छोड़ सकत भौंरी फिरबु भूलिगा जो अब चौंचौं करिहो तौ मुच्छुन्ही उखारि डरिहौं ॥

सपथू०—बस २ चुप रहो—तुम हमारी स्त्री क्या इज्जत लेने को ग्रनु हुई हो हम कहैं आम की तू कहे इमली को

कंजरी—(धक्का लगा कर) इन्दकु—चलौ चलौ जाव जाव इज्जति लेन नाईं का देन आई हौं देखु कौन कौन कर्म अबै त्वार हाय ॥

सपथू०—हे ईश्वर वृद्धावस्था में विवाह किसी का न हो ऐसी स्त्री तो मैंने कभी न देखी थी ॥

[कंजरी बोली]

तुव साथी देख्यौं मैं लाख ।
चिटिर बिटिर कछु अब नहिं भाख ॥
नाहिं तो कर्म सबै करि डरिहौं ।
बातहि कहत प्राण लै मरिहौं ॥
मैं हौं गुमन उनम की पूरी ।

तद्दसै गात बन्यों है भूरी ॥
आँखें निरखि लेहु तुम लाला ।
धोय लाव मुह कीन्यों ताला ॥
फिर तुम आय करो कछु बातें ।
उत्तर देहु खाव जम लातें ॥

सपथृ०—प्यारी तुम कुछ हाती हो इस से मैं अब कहीं चलाजाऊंगा तुम अकेली रहकर जैसा चाहियो करियो॥

कजरी—कैसेउ जावती वहिजाव नीक होय ॥

[सपथृदास सब गृहस्थी का सामान छोड़ कर चल दिए]

(मार्ग में प्रेमानन्द मिले)

प्रेमानन्द—हे बाबा जी आप क्यों रोते हुए मार्ग में चले जाते हैं ॥

प्रेमानन्द के बहुतही पूछने पर सपथृदास ने यह कहा

कंजरि एक नारि है आई ।
तेहिने हमका दीन्ह भगाई ॥
वही बिसूरति रोवहिं ताता ॥
अनुचित कहीं मोंहि बहु बाता ॥
जब निज तिरियै ऐसा कीन्हा ॥

धर्माधर्म सोचि नहिं लीन्हा ।
असह वाक्य मुख कहेसि अनेका ॥
दूजो क्यों अब करहि विवेका ॥
कारण याहि भागि कहुं जइहैं ॥
मरिहैं बूड़ि जहाँ जल पइहैं ॥

प्रेमा०—हे बाबा जी आप को यह अवस्था है तिस पर भी अज्ञान की बातें करते हो आप क्रोध को शांति करके घर लौट जाइए और ऐसा बचन किसी दूसरे के सन्मुख न कहिए ॥

सपधू०—क्या करूं जी जलता है कुछ कहते नहीं बनता हे ईश्वर हम को सृष्टि से जुदा करलो हे परमेश्वर मैं जीना नहीं चाहता (ऐसा कह कर सपधूदास घर लौट आए)

सपधूदास को देख कर कस्तूरी बोली

हटो हटो अबहीं तुम जाओ ।
रहो जाय जहं घर कहुं पाओ ॥
उठो उठो जल्दी तुम कूरे ।
कहाँ बुझाय बहुत कछु रूरे ॥
जो पग को अब घर में धरिहो ।
पाछे सोच अधिक तुम करिहो ॥

भागि गयो पहिले रिसिआई ।
मिले आय पुनि क्यों खिसियाई ॥
तुहिं घर में तबहीं मैं रखिहौं ।
सब मन सकहु जोइ कटु भखिहौं ॥
तौतौ मम संग छोहि निबाहू ।
रहौ सोचि ज्यों कीन्ह बिवाहू ॥

सपथूदास फिर घर से निकल खड़े हुए और गुरू मुकुन्दरगिर के देश को चले गुरू के यहां पहुंच गए

मुकुन्दरगिर सपथूदास को देख कर कहते हैं

जल्द हाल तुम हमको बताओ ।
किस मनुजने आनि अबहूं सताओ ॥
करूं अभी यतन जम को बुलाकर ।
मंत्रजंत्र जादू से हरवहिं सुला कर ॥
भारी दंड मैं उसको दिलावौं ।
करिके भस्म मिट्टी में मिलावौं ॥
मकर सोच बचे दिल में कछू ।
हाथ अपने से तु उसको न छू ॥
दूर से खड़ा तू देखै तमाशा ।
मुख से झूठ निकले नहिं जरासा ॥

[सपथूदास ने नहीं नहीं कुछ भी नहीं कर के, बड़ी कठिनता से गुरू जी से सब व्यौरा कहा तब इन्हों ने नन्दिरूप को भेज कर कंजरी को बुलाया]

[नन्दिरूप कञ्जरी को बुला लाया]

---

६ अंक

मु०—सब शिष्य वर्गों सुनो। आज के दिन मुझे अति हर्ष है और यही इच्छा होती है कि किसी रमणीक स्थान में रमण कर प्रभु का ध्यान करें और वहां की शोभा भी देखें दिखावें॥

नंदिरूप—सत्य है—परन्तु इस अवसर में मुझे एक कार्य्य ऐसा आ लगा है कि जिस के कारण जाना कदापि नहीं हो सकता हाँ कल अवश्य चलूंगा कदाचित आप यही चाहती हों कि अभी चलें तो लो तय्यार हूं॥

[सब चलने को हुये]

मुछ०—कह बच्चा रमणीक स्थान कहाँ है जो तू न जानता हो तो प्रथम जाकर किसी से पूंछ ले जिस में भटकाव न हो—

नंदिरूप—गुरू जी आप चलने को तय्यार हो गये पर मार्ग नहीं जानते देखो हमारा कार्य्य भी न हो पाया अब तक हमीं वृथा यहाँ पड़े रहे हैं—आप को गुरू समझ छोड़ देता हूं कदाचित कोई दूसरा होता तो इसे हम रमणीक स्थान अच्छे प्रकार बतला देते—

मुकु०—अरे बन्दे हमने क्या बिगाड़ा जो रमणीक स्थान नहीं बताता दूसरे को क्यों बतलावेगा क्या गुरू से इस को विशेष चाहते हो॥

नंदिरूप—धन्य है तुम्हारी समझ और बुद्धि को। अब जल्द ही चलिये देर न कीजिये॥

मुकु०—हाँ हा चलो। बहुत ठीक कहते हो परन्तु मार्ग में जो थक जाऊं तो कन्धे पर बिठला लेना॥

नंदि०—महाराज जो कन्धा क्या सिर पर बैठाल नेत्रों से पग पोंछता चलूंगा॥

मुकु०—जो अपने पग मेरे नेत्रों से पोंछोगे तो मैं बहुतही दुखित हूंगा क्योंकि मेरे पैर और यह पेट तुम्हारे कन्धे पर और सिर पगों पर आ जायगा तो लचते लचते मुझे अवश्य ही क्लेश मिलेगा॥

नंदि—नहीं २ गुरू जी बाह ऐसा कह कर मुझे नर्क में डालोगे—देखो मैं कहता हूं कि अपने नेत्रों से आप के पग पोंछता चलूंगा—

मुकु०—क्या चढने के समय मेरे पगों में मिट्टी भरी र-
हेगी और रहे भी तो जब चढने को हूंगा धो डालूंगा
और जो तू पोंछा ही चाहै तो कपड़े से पोंछ लिया करै॥
नंदिरूप—अच्छा गुरू जी महाराज जैसा कहोगे वैसा ही
करूंगा—

[मुकुन्दर गिरि सपथूदास से कहता है]

मुकु०—कहो सपथूदास तुम्हारी स्त्री अब तो कुछ दुर्भाव
नहीं रखती ॥
नंदि०—वह क्यों न रक्खेगी है तो जात की कंजरी ही ॥
सपथू०—नहीं अब दुर्भाव नहीं रखती ॥
कंजरी—धाखो गुरू जू नंदिरूपवा चुप्पहीं ठाढ रहै तौ
नीक है—गुरू जू हमार सुभाव तो हलुके तवा की नाईं
है तनकुइ माँ गरम और तनिकुइ मा ठंढ होइ जात है ॥
मुकु०—हाँ हाँ मैं जानता हूं कि तू बहुत भली और सीधी
है देख तेरा पिता कैसा प्रसिद्ध है कि गर्भ का बालक
तक उसे जानता होगा उसी की तू बेटी है फिर भला
सीधी सच्ची और प्रतिष्ठित धर्मात्मा क्यों न होगी—
नंदि०—गुरू जी आप तो बातों में लग गये जो कहीं न
चलना हो तो जाय अपना काम करूं ॥
मुकु०—अच्छा अबै चलता हूं सब लोग तय्यार हैं या नहीं॥

नंदि०—ये सब तो दो घण्टे से तय्यार खड़े २ मुच्छों पर ताव दे रहे हैं ॥

मुकु०—मुच्छों पर ताव अरे प्रभू यह तू ने क्या कहा ॥

नंदि०—कहा क्या कुछ भी नहीं झटपट चलो सब ठाढे हैं॥

मुकु०—नहीं २ बच्चे तूने पहिले कुछ और ही कहा था क्यों नहीं बतलाता है ॥

नंदि०—सपथूदास आप सब समेत कुटी को लौट चलें ॥

मुकु०—चलता हूं चलता हूं अब न जाओ (सब मुकुन्दर गिरि सहित चले)

[मार्ग में अच्छे २ परम हंस सन्यासी सबों को देख पड़े]

मुकु० – तुम सब लोग भेष बदल डालो और नारायण नारायण हरीहर कहते हुए उन से चल कर मिलो पीछे से मैं भी आता हूं ॥

सपथू० – हे गुरू जी मैं आप के बिना अकेले न जाऊंगा क्योंकि आप शोभा हैं ॥

नंदि० – आओ जी सपथूदास हम तुम सब चलें गुरू जी तो अब अन्त ही जाते हैं ॥

मुकु० – देख अब ऐसा मत कहना क्या तूने मुझ को मरा समझ लिया जब तेरी पर्वाह नहीं रखता हूं तब तो

यह हाल कदाचित पर्वाह रक्खूं तो न जानें कि तू क्या क्या कहे।

नंदि०—हाय हाय गुरु जी मैंने आप को क्या कटु वचन कहा और क्योंकर कहूंगा आप स्वामी और मैं सेवक हूं—

मुक्त०—अरे हाँ हाँ बच्चे मेरे समझ में फेर हो गयाथा अच्छा अब मैं भी चलता हूं—(सब चल हुए)

सपथू०—गुरु जी महाराज चलते समय आपका पांव क्यों अटकता है और यहां गांठ के नीचे घाव सा हो गया है इस का क्या कारण॥

मुक्त०—बच्चे—मैं एक दिन पूर्णमासी को अपने सब शिष्य वर्गों सहित दक्षिणी समुद्र में अस्नान करने गया था जब क्रिया कर्म से निश्चिन्त हो चलने को हुआ तो अचानक एक कच्छप स्थल में आय पाँव पकड़ जल में ले गया, घड़ियाल ने यह चरित्र देख मगरजी से जा कहा कि जो कोई मनुष्य या जीव जलाशय जान समुद्र के तट पर आता है उस को शृङ्गी नाम एक कच्छप जल में ले जाकर मार डालता है सो यह बात सर्वत्र फैल गयी है इस कारण भय के मारे अब कोई भी नहीं आता और अपकीर्त्ति हमारी ही तुम्हारी होती है तिस पर भी आहार न मिलने के कारण रात्रि दिन क्षुधित रह त्राहि २ किया करते हैं अतएव ऐसा यत्न

करना चाहिये कि फिर प्रथमही की भाँति सब जीव जन्तु तट पै आने जाने लगें—मगर बोला कि यह बात तभी होगी कि जब कच्छप न रहे और हम तुम भी सन्तोष कर पन्द्रह बीस दिवस तक किसी से न बोलें—घड़ियाल ने कहा कि सत्य है पर अब इस के मारने की तद्बीर कीजिये—देखो जितने जल जीव हैं सब इसी के सहायक हो जाते हैं—मेरे विचार में आता है कि गोह के द्वारा मिस कर के कच्छप को भवंर पुर में बुलवाइए तो वह स्वशुरालय जान निस्सन्देह चला आवेगा। मगर ने कहा कि झूठ और असत्य भाषण तो मैं कदापि न करूंगा मिस कर के छलिया क्यों बनूं देखिये इसी विचार से मैं समुद्र के तट पै आये हुये मनुष्य तथा और जीवों को प्रथम दिखलायी देकर पीछे से घात करता हूं कि जिस में वह चैतन्य हो जावे कदाचित ईश्वर ने यह आहार हमारे लिए नियत न कर दिया होता तो हिंसा भी मुझ से कभी न होती क्या करूं पेट नहीं मानता इस से परतंत्र हूं। और आप समुद्र तटीय मनुष्य को निरख जल के भीतर ही भीतर छुप के से समीप पहुंच तुरन्त ही जा दबाते हो केवल यही आप और मुझ में अन्तर है वैसे तो आप अति चतुर बुद्धिमान शूर साहसी और परोपकारी हैं

घड़ियाल ने लज्जित हो हाथ जोड़ सिर नाय कर कहा कि आप अपनी सब सेना साज कर रात्रि के समय कच्छप का हार जा घेरें पीछे से मैं भी तीस लच सेना ले डंका बजाय आ मिलूंगा संक्षेप वृत्तांत यह है कि वहाँ कच्छप ने भी अस्सी कोटि सेना संचय कर रक्खी थी क्योंकि इस ने प्रथम ही से सब समाचार ज्ञात कर लिये थे जब कि मैं अज्ञान को गया था और इसी कारण इन्होंने मुझ को नहीं मारा वैसे तो वह चण मात्र में प्राण हर लेता परन्तु मगर के भय से छोड़ अपने स्थान को चला गया और मैं स्थल में भाग आया इसी कारण यह घाव देख पड़ता है। आगे सुनिये कि उन दोनों के मध्य में बड़ा भारी घोर संग्राम हुआ जीवों के कटने से जल में रक्त ही रक्त दिखलाई देने लगा तब एक असुर आ गया वह समुद्र के भीतर जाय चार चार छै छै घड़ियालों को पकड़ २ बाहर फेंकने लगा अब जहाँ दृष्टि करो वहीं घड़ियाल ही घड़ियाल देख लो उसी समय एक डाइन कि जिस का नाम भयंकरी था काले वस्त्र धारण किये हाथों में मूसल लिए फटी नासिका में पर्दा दिये छींकती हुई चली आती है और उन मृतक घड़ियालों को चबाये डालती है जब सब चबा चुकी झट जल के भीतर पहुंच गयी और उस अ-

सुर से कहने लगी कि तू कौन है जो आकर मेरा भक्षण बना असुर ने भय भीत हो नर्मी से उत्तर दिया कि तुम्हारा सेवक और कच्छपों का सहायक हूं डाइन बोली कि मगरों को छोड़ सब घड़ियालों को मार डालों जो कहीं कोई कसे बसे बचे बचाये रह गये हों तो उन के लिये मेरा यह शराप है (सुछन्दर गिरी छछून्दर चेला रक्खे इन को जगत अकेला) ऐसा कह कर वह डाइन आकाश को चली गयी ।—

नंदिरूप—गुरू जी जल्द ही चलिये धीरे २ लोटती बिरियाँ चलियो ॥

[सब लोग परम हंसों के पास पहुंच गये]

सुछ०—कहिये महाराजो आप के गुरू कोई हैं ॥

नंदि०—(मना कर के) हां—गुरू जी आप ऐसे न पूछिये ॥

सुछ०—(झुंझला कर) चलबे चल जब देखो एक न एक तर्क ही किया करता है कह कैसे पूछूं ॥

नंदिरूप—जैसे अभी पूंछा वैसे ही पूंछो मैं क्या कहूं ॥

सुछ०—मुझे तो अब सुध ही नहीं आती कि कैसे पूंछा था॥

नंदि०—आपने कहा था कि महाराजो आप के गुरू कोई हैं

सुछ०—हाँ हाँ अब सुध आगयी कहिये गुरू जी कहां पर बिराजते हैं ॥

[एक परम हंस बोला]

गुरू जी हमारे वे सूर्य्य लोक की ओर ध्यान लगाये खड़े हैं ॥

(सब मिल कर गुरू के पास गये)

(मुकुन्दर बोल उठा)

सोरठा ।

प्रभु तन नेह बढ़ाय । आप खड़े हैं दया निधि ॥
मोहूं ज्ञान दृढ़ाय । नीति देहु सब जनन को ॥

दोहा ।

पानि जोरि बिनती करूं । सन्मुख रहौं निहार ॥
संसारिक व्यहार तजि । संगहि करौं बिहार ॥
मेरी इच्छा है यही । और नहीं चित धार ॥
सदा सर्वदा देश में । लगहि ध्यान निश बार ॥
धन्य धन्य है स्वामि को । गाता नन्द खिसारि ॥
पड़े एक प्रभु भजन में । दारा कुटुंब बिसारि ॥
माया मोही जगत में । दोउ भारी हैं बाट ॥
इनमें भेदित हीन से । काटत नहीं कछु पाट ॥

[जब मुकुन्दर गिर ने बहुतही बिनय की तब गुरू कमलनंद जी बोले]

कमल० – धन्य प्रारब्ध कि आप सदृश महात्माओं के दर्शन मिले कहिये क्या आज्ञा है ॥

मुक्त० — हे महात्मा गुरु जी आप को ईश्वराभ्यास करते देख यह लालसा बढ़ी कि जाकर दर्शनही करूं ऐसा समझ सिवकाई मे आ पहुंचा। गुरु जी आप के स्वरूप को देख मेरा चित्त ऐसा हुलसता है कि मानों जन्म दरिद्री ने राज्य पद पाया हो — महात्मा जी आप ने निवास् स्थान कब छोड़ा था और कहां जाने की अभिलाषा है मुझे भी शिष्य बना कर साथ ले चलिये॥

कमल० — मुझे निवास् स्थान छोड़े लगभग साठ या बासठ वर्षे हुई होंगी और अब रमणा पुरी में जाने की इच्छा है जो बैकुंठ का सप्तम द्वार कहा जाता है सो यही पुरी है॥

मुक्त० — गुरु जी मैं अब धूर्तपन सब त्याग दूंगा — बाघ चर्म को कांख में दाबना सम्पूर्ण शरीर में भस्म रमाना और चिमीटा हाथ में लेना भयंकर स्वरूप रात्रि दिन बनाये रखना केशों की पगड़ी बांधना गांजे की भजक उड़ाना पर्वतों पर बैठ कर सिंह के बच्चों का पालना कुटी के आगे धूनी लगाना चिल्ला कर हरिहर करना कुत्ते बिल्ली डंगर लोमड़ी को खेलाना अघोरपन करना मंत्र जंत्र तंत्र का पढ़ना इत्यादि जितनी ढोंग की बातें हैं सभी छोड़ कर आप का शिष्य हो जाऊंगा॥

(कमल नंद जी ने शिष्य किया और फिर वृन्द सहित रमणपुरी को चले)

(कुछ दिवस व्यतीत होने पर मार्ग में सपथ दास ने यह कहा)

सपथ्० – गुरु जी महाराज अब हम लोग मेघों के मार्ग में चल रहे हैं अहा आकाश गंगा की शोभा को देखिये कि तारे कैसे छिटिक रहे हैं ओहो हो वही पृथ्वी जिसपर हम रहा करते थे कैसी गोलाकार दृष्टि आती है और अपनी मित्र कलानिधि के साथ निजकक्षा पै घूमती हुई सूर्य्य मंडल की परिक्रमा कर रही है देखिये इस के उत्तरी और दक्षिणी छोर पर दो ध्रुवतारे कैसी शोभा देरहेहैं चारों ओर निरा जलही जल देख पड़ता है यह वही चन्द्र मण्डल है कि संध्या से लेकर प्रातः पर्य्यंत उदय रहा करता है इसी से रात्रि को कुमोदनी खिलती और हंस पक्षी सुन्दर सरोवर और सागरों में प्रकाश को देख २ प्रसन्न हो विहार करते हैं सम्पूर्ण आकाश तारों से भूषित हो रहा है सूर्य्य मंडल को देखिये कि जिस के चारों ओर बुध शुक्र मंडल वृहस्पति शनीश्वर इत्यादि सब ग्रह और उपग्रह पुच्छल तारों सहित प्रसन्न हो हो कर उसके आस पास नृत्य कर रहे हैं धन्य है धन्य है उस सर्व शक्ति मान जगदीश्वर को

कि जिस की रचना का अंत कोई नहीं पासकता -

कमल० - कहो मुकुन्दगिर आपने यह स्थान कभीदेखाथा

मुकु० - अरे महाराज की बातें हम क्या हमारे पुरुषों के सरखों और धुरखों ने भी नहीँ देखा होगा । बल्कि सुना भी न होगा ॥

कमल० - देखो उस दिशा में क्या श्याम घटा उमड़ रही है बिजली के रहने का स्थान यही है और रमण पुरी भी वहीँ है ॥

(थोड़ी देर बाद)

मुकु० - अ ह ह क्या कहना है । वाह वाह देखिये अधर में कैसी छत सी बंधी हुई है प्रशंसा है उस सभा कारक की सब ऋद्धियां सिद्धियाँ यहाँ दृष्टि पड़ती है ॥

कमल० - अब चुप चाप चले चलो देखो धर्मराज और यमराज अपने २ सहायकों सहित बैठेहुए हैं और चित्र गुप्त लिखा पढ़ी कर रहा है ॥

(चलते २ सब रमणपुरी में जापहुंचे और ईश्वराभ्यास करने में प्रवृत होगये)

(रमणपुरी की शोभा का वर्णन)

चौपाई ।

कमल नंद जब इन्द्र लिवाई ।
पहुंच्यो पौरि रमणपुर जाई ॥

सप्तम पौरि कीन्ह विश्रामा ।
सर्वानन्द निरखि बहु धामा ॥
अति प्रसन्न ह्वै कहहिं सुकुंदर ।
लोक नहीं कोइ याते सुंदर ॥
निरखि २ शोभा हरषाहीं ।
कमलनंद मन मोद बढ़ाहीं ॥
अब मैं विषय योग्य कछु कहिहौं ।
चित प्रसन्न करि प्रभु गति गइहौं ॥
छत्त एक आकाश दिखाई ।
चौंसठ योजन कछु अधिकाई ॥
तामें बिछे परस्तर नीके ।
संगमर्मर है भावति जी के ॥
मध्य मध्य संग मूस सुहाई ।
नयन स्वेत में श्याम गुलाई ॥
या हीरा बिच नीलम सोहै ।
गौरि भृकुटि बिच बिन्दी मोहै ॥
सोहहिं भीतर षोड़ तड़ागा ।
खिले कमल अरु बोलहिं खागा ॥
हन्सा कीर मोर अरु श्यांमा ।
चकत्र चकोर कपोत ललामा ॥
बने घाट अति उत्तम सोहैं ।

निकट नाव तिनके ये सोहैं ॥
मोर पंखिया श्याम हरी ।
कृष्ण सुखी अरु मदन भरी ॥
देवराज शिव यान सवारी ।
ऋषी बिमान पताका धारी ॥
तामें बैठि वृन्द सन्यासी ।
मोक्ष पृथक ह्वै करत अभ्यासी ॥
वृद्ध आयु अति उत्तम बेशा ।
पग लग छाए स्वेतहि केशा ॥
चिबुक केश से अंग छिपाये ।
नयन मूंदि तहं ध्यान रमाये ॥
कोटिन भानु अनेकिन तारा ।
अर्ध चन्द्र लखित निशि बारा ॥
पृथक पृथक हैं धाम सुहाये ।
चन्द्र भुवन अरु कृष्ण लुभाये ॥
हरि निवास अरु दिन पति भवनूं ।
तहीं राग सब कीन्हें गवनू ॥
देवि परी तहं रहस मचावै ।
फ़वन फ़लक पर कान्ति रमावैं ॥
गन्धर किन्नर अरु बहु देवा ।
करहिं गान तान नहिं भेवा ॥

बाजहिं बाजन विविध प्रकारा ।
छवि कहं निरखि इन्द्रहूं हारा ॥
कहीं नृत्य कहिं रहस सुहाई ।
कहीं विदूषक खेल सुभाई ॥
कहीं बेद धुनि होहि पुनीता ।
कहीं शास्त्र विधि न्याव सुनीता ॥
कहिं मणियों के धाम सुहाये ।
कहीं देव अमृत बरसाये ॥
कहीं यज्ञ अरु बंटता दाना ।
प्रभु भक्तीय पतिहिं सनमाना ॥
शोभा न्यून कहौं मैं गाई ।
पढिये शोक तुरत भगि जाई ॥

सूचना ।

ईश्वर के धन्यबाद के पश्चात विदित हो कि मैं इस छोटी सी पुस्तक को अब समाप्त करताहूं आशा है कि सज्जन मनुष्य देख कर प्रसन्न होंगे और ऐसा उत्साह दिखलावेंगे कि निम्न लिखित नाटक जो मैंने बड़े परिश्रम से रचे

हैं शीघ्र ही में बे परिश्रम आनन्द पूर्वक छप जाना कुछ कठिन बात न होगी। हे ईश्वर आप की कृपा से सर्व मनुष्य सुख युक्त सदा रहें छल प्रपंच असत्य भाषण और ईर्षा को त्यागें यही बारम्बार मेरी विनय है ॥

"निम्न लिखित नाटक भी शीघ्र ही छपेंगे"

(१) गौरी विनोद नाटक (२) कामभस्म नाटक
(३) रंकशोक नाटक (४) व्यभिचार नाटक
(५) खभर धभर नाटक ॥

सम्पूर्णम् शुभमस्तु ।

हस्ताक्षर कमला चरण मिश्र
ग्राम पूरा परगना बिल्हौर ज़िला कानपुर शुभ
मि० कार्तिक सुदी सप्तमी सम्वत् १९४१ विक्रमी